COLLABORATIVE JOURNAL OF MULTI-DISCIPLINARY RESEARCH (CJMDR)
A Peer Reviewed Multi-Disciplinary E-Journal
Jan-June- 2026, Vol. 1
https://cjmdr.com

आधुनिक भारतीय सामाजिक मूल्यों एवं मानकों की दृष्टि से दुर्गानंद सिन्हा के 'सोशल साइकोलॉजी इन इंडिया' का आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन

प्रो0 ज्योति गौतम
कु. कुसुम
राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर

सारांश -

दुर्गानंद सिन्हा का 'सोशल साइकोलॉजी इन इंडिया' भारतीय सामाजिक मनोविज्ञान के विकास में एक आधारभूत कृति मानी जाती है, जिसने पश्चिमी मनोवैज्ञानिक ढाँचों के स्थान पर सांस्कृतिक रूप से संदर्भित ज्ञान-निर्माण की आवश्यकता पर बल दिया। यह शोध-पत्र आधुनिक भारतीय सामाजिक मूल्यों और मानकों के आलोक में उनके विचारों का आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। अध्ययन यह विश्लेषण करता है कि किस प्रकार सिन्हा ने भारतीय समाज में परंपरा और आधुनिकता के सह-अस्तित्व, परिवार की केंद्रीय भूमिका, सांस्कृतिक मूल्यों, और स्वदेशी मनोविज्ञान की अवधारणा को व्याख्यायित किया। साथ ही यह भी दर्शाया गया है कि वैश्वीकरण, डिजिटलीकरण, शहरीकरण, लैंगिक समानता आंदोलनों और बदलती पारिवारिक संरचनाओं ने उनके सिद्धांतों को नए संदर्भ प्रदान किए हैं। शोध यह तर्क देता है कि यद्यपि सिन्हा का दृष्टिकोण आज भी अत्यंत प्रासंगिक है, फिर भी समकालीन भारतीय समाज की जटिलताओं को समझने के लिए उनके ढाँचे का विस्तार आवश्यक है। विशेष रूप से डिजिटल पहचान, बहुसांस्कृतिक प्रभाव, और सामाजिक असमानताओं के नए रूपों ने सामाजिक मनोविज्ञान को अधिक बहुआयामी बना दिया है। यह अध्ययन निष्कर्षतः यह स्थापित करता है कि सिन्हा का योगदान भारतीय मनोविज्ञान को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है, जिसे आधुनिक संदर्भों में पुनर्परिभाषित करना आवश्यक है।

कुंजी शब्द- भारतीय सामाजिक मनोविज्ञान, दुर्गानंद सिन्हा, सामाजिक मूल्य, सामाजिक मानक, स्वदेशी मनोविज्ञान, सांस्कृतिक मनोविज्ञान, परंपरा और आधुनिकता, वैश्वीकरण, डिजिटलीकरण, पारिवारिक संरचना, लैंगिक समानता, सामाजिक परिवर्तन, पहचान निर्माण, बहुसांस्कृतिकता, सामाजिक व्यवहार, भारतीय संस्कृति, मनोवैज्ञानिक सिद्धांत, सामाजिक संरचना, मूल्य परिवर्तन, समकालीन भारत

प्रस्तावना-

भारतीय मनोविज्ञान के इतिहास में प्रोफेसर दुर्गानंद सिन्हा का नाम अत्यंत सम्मान और गंभीरता के साथ लिया जाता है। उन्होंने न केवल भारत में सामाजिक मनोविज्ञान के विकास को नई दिशा प्रदान की, बल्कि यह भी स्थापित किया कि किसी समाज को समझने के लिए उसके सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामाजिक संदर्भों को केंद्र में रखना आवश्यक है। जिस समय भारतीय मनोविज्ञान पश्चिमी सिद्धांतों और पद्धतियों के प्रभाव में विकसित हो रहा था, उस समय सिन्हा ने यह प्रश्न उठाया कि क्या यूरोप और अमेरिका में विकसित मनोवैज्ञानिक सिद्धांत भारतीय समाज की जटिलताओं को पूर्णतः समझा सकते हैं। उनका उत्तर स्पष्ट रूप से नकारात्मक था। उनका मानना था कि भारतीय समाज की संरचना, उसके मूल्य, उसकी पारिवारिक

व्यवस्था, धार्मिक चेतना और सामुदायिक जीवन पश्चिमी समाजों से भिन्न हैं; इसलिए भारतीय मनुष्य के व्यवहार को समझने के लिए भारतीय संदर्भों पर आधारित मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना आवश्यक है ।

दुर्गानंद सिन्हा का बौद्धिक योगदान केवल पश्चिमी मनोविज्ञान की आलोचना तक सीमित नहीं था। उन्होंने भारतीय संस्कृति और आधुनिक वैज्ञानिक मनोविज्ञान के बीच संवाद स्थापित करने का प्रयास किया। उनके अनुसार भारतीय परंपरा में आत्म, चेतना, नैतिकता, सामाजिक संबंध और मानवीय व्यवहार के संबंध में समृद्ध वैचारिक धरोहर मौजूद है, जिसे आधुनिक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान से जोड़ा जा सकता है। इस दृष्टिकोण ने भारतीय मनोविज्ञान में स्वदेशीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान की और यह विचार स्थापित किया कि ज्ञान का निर्माण स्थानीय अनुभवों और सामाजिक वास्तविकताओं के आधार पर होना चाहिए ।

सिन्हा के सामाजिक मनोविज्ञान की सबसे महत्वपूर्ण विशेषताओं में से एक परंपरा और आधुनिकता के सह-अस्तित्व की अवधारणा है। उनका तर्क था कि भारत में आधुनिकीकरण का अर्थ परंपरागत मूल्यों का पूर्णतः लोप नहीं है, बल्कि दोनों के बीच एक जटिल अंतःक्रिया का निर्माण है। यह विचार आज के भारत में भी अत्यंत प्रासंगिक दिखाई देता है। आर्थिक उदारीकरण, सूचना प्रौद्योगिकी, वैश्वीकरण और शहरीकरण ने भारतीय समाज को गहराई से प्रभावित किया है, किंतु परिवार, धर्म, जाति, समुदाय और सांस्कृतिक परंपराएँ आज भी सामाजिक जीवन के महत्वपूर्ण आधार बने हुए हैं। आधुनिक भारतीय युवा वैश्विक संस्कृति से जुड़ते हुए भी पारिवारिक उत्तरदायित्वों और सांस्कृतिक मान्यताओं को महत्व देता है। यही वह स्थिति है जिसकी ओर सिन्हा ने संकेत किया था कि भारत में आधुनिकता और परंपरा एक-दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि सह-अस्तित्वशील शक्तियाँ हैं।

हालाँकि समकालीन भारत में सामाजिक परिवर्तन की गति इतनी तीव्र हो चुकी है कि सिन्हा के कुछ निष्कर्षों की पुनर्समीक्षा आवश्यक हो जाती है। सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, वैश्विक संचार नेटवर्क और डिजिटल जीवन-शैली ने व्यक्तियों की पहचान, संबंधों और सामाजिक व्यवहार को नए रूप प्रदान किए हैं। आज व्यक्ति केवल अपने स्थानीय समुदाय से नहीं बल्कि वैश्विक डिजिटल समुदायों से भी प्रभावित होता है। ऐसे में सामाजिक पहचान का निर्माण पहले की अपेक्षा कहीं अधिक बहुआयामी हो गया है। इस परिवर्तन को समझने के लिए सामाजिक मनोविज्ञान को परंपरा और आधुनिकता की द्वैतात्मक व्याख्या से आगे बढ़ना होगा।

भारतीय परिवार को लेकर सिन्हा की व्याख्या अत्यंत प्रभावशाली रही है। उन्होंने परिवार को सामाजिककरण, मूल्य-संक्रमण और व्यक्तित्व-निर्माण की मूल इकाई माना। उनके अनुसार भारतीय परिवार व्यक्ति में सहयोग, सामूहिक उत्तरदायित्व, पारस्परिक निर्भरता और भावनात्मक निकटता जैसे गुणों का विकास करता है। यह दृष्टिकोण आज भी काफी हद तक सत्य प्रतीत होता है। भारतीय समाज में परिवार अभी भी जीवन के महत्वपूर्ण निर्णयों—शिक्षा, विवाह, व्यवसाय और सामाजिक प्रतिष्ठा—को प्रभावित करता है।

फिर भी पारिवारिक संरचना में व्यापक परिवर्तन दिखाई देते हैं। संयुक्त परिवारों की संख्या घट रही है और एकल परिवारों का विस्तार हो रहा है। महिलाओं की शिक्षा और रोजगार में बढ़ती भागीदारी, विवाह की बढ़ती आयु, शहरी प्रवासन तथा आर्थिक स्वायत्तता ने पारिवारिक संबंधों को नई दिशा दी है। युवा पीढ़ी व्यक्तिगत आकांक्षाओं और पारिवारिक अपेक्षाओं के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास कर रही है।

इससे स्पष्ट होता है कि परिवार की केंद्रीयता बनी हुई है, किंतु उसकी प्रकृति और कार्यप्रणाली में महत्वपूर्ण बदलाव आ चुके हैं।

लैंगिक संबंधों के संदर्भ में भी सिन्हा के विचारों का आलोचनात्मक परीक्षण आवश्यक है। जिस समय उन्होंने अपने विचार प्रस्तुत किए, उस समय भारतीय समाज अपेक्षाकृत अधिक पितृसत्तात्मक था। आज स्थिति काफी बदल चुकी है। महिलाओं की शिक्षा, रोजगार, राजनीतिक भागीदारी और सार्वजनिक उपस्थिति में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। नारीवादी आंदोलनों ने लैंगिक समानता, प्रजनन अधिकार, कार्यस्थल पर न्याय और सामाजिक प्रतिनिधित्व जैसे मुद्दों को प्रमुखता प्रदान की है। साथ ही LGBTQ+ समुदाय की बढ़ती दृश्यता ने लैंगिक पहचान और यौनिकता से संबंधित पारंपरिक धारणाओं को चुनौती दी है। इसलिए आधुनिक भारतीय सामाजिक मनोविज्ञान को उन विविध अनुभवों को भी शामिल करना होगा जिन्हें पूर्ववर्ती सिद्धांत पर्याप्त रूप से संबोधित नहीं कर पाए थे।

स्वदेशी मनोविज्ञान के क्षेत्र में सिन्हा का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उन्होंने इस विचार का समर्थन किया कि मनोवैज्ञानिक सिद्धांत स्थानीय सांस्कृतिक अनुभवों से विकसित होने चाहिए। यह दृष्टिकोण उस धारणा के विरुद्ध था कि पश्चिम में विकसित सिद्धांत सार्वभौमिक रूप से लागू होते हैं। आज वैश्विक स्तर पर मनोविज्ञान में उपनिवेशवाद-विरोधी विमर्श और ज्ञान के स्थानीयकरण की मांग बढ़ रही है। सांस्कृतिक मनोविज्ञान और अंतर-सांस्कृतिक मनोविज्ञान के अनेक अध्ययनों ने सिद्ध किया है कि आत्म-बोध, भावनात्मक अभिव्यक्ति, नैतिक निर्णय और सामाजिक व्यवहार संस्कृति के अनुसार भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करते हैं। इस संदर्भ में देखा जाए तो सिन्हा अपने समय से काफी आगे की सोच रखते थे।

फिर भी स्वदेशीकरण की अवधारणा को पूर्णतः आत्मनिर्भरता के रूप में नहीं देखा जा सकता। आधुनिक भारत वैश्विक अर्थव्यवस्था, शिक्षा और तकनीक से गहराई से जुड़ा हुआ है। इसलिए भारतीय मनोविज्ञान का विकास वैश्विक ज्ञान से संवाद स्थापित करते हुए ही संभव है। स्वयं सिन्हा भी पश्चिमी मनोविज्ञान को अस्वीकार करने के पक्षधर नहीं थे, बल्कि वे सांस्कृतिक अनुकूलन और बौद्धिक समन्वय के समर्थक थे। यही कारण है कि उनका दृष्टिकोण आज भी प्रासंगिक माना जाता है।

सामाजिक मूल्यों के संदर्भ में सिन्हा ने सामूहिकता, बड़ों के प्रति सम्मान, पारिवारिक निष्ठा, सामाजिक सामंजस्य और आध्यात्मिकता को भारतीय समाज की प्रमुख विशेषताओं के रूप में देखा। निस्संदेह ये मूल्य आज भी भारतीय सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किंतु समकालीन भारत में मूल्य-व्यवस्था अधिक विविध और जटिल हो गई है। उपभोक्तावाद, प्रतिस्पर्धा, व्यक्तिगत उपलब्धि, आत्म-अभिव्यक्ति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता जैसे मूल्य तेजी से उभर रहे हैं । युवा पीढ़ी पारंपरिक सामाजिक अपेक्षाओं के साथ-साथ व्यक्तिगत आकांक्षाओं को भी महत्व देती है। परिणामस्वरूप भारतीय समाज में मूल्य-बहुलता की स्थिति विकसित हुई है।

जाति के प्रश्न पर भी आधुनिक दृष्टिकोण सिन्हा के विश्लेषण का विस्तार करता है। भारतीय समाज में जाति आज भी सामाजिक पहचान, संसाधनों की उपलब्धता, राजनीतिक भागीदारी और सामाजिक प्रतिष्ठा को प्रभावित करती है। यद्यपि संवैधानिक प्रावधानों और आरक्षण नीतियों ने अनेक सकारात्मक परिवर्तन किए हैं, फिर भी सामाजिक असमानता और भेदभाव के विभिन्न रूप मौजूद हैं । आधुनिक सामाजिक मनोवैज्ञानिक शोध यह दर्शाते हैं कि जातिगत अनुभव व्यक्ति के आत्मसम्मान, आकांक्षाओं और मानसिक स्वास्थ्य को

प्रभावित करते हैं। डिजिटल माध्यमों ने जाति-आधारित विमर्श को नई दिशा दी है, जिससे यह विषय और अधिक जटिल हो गया है।

दुर्गानंद सिन्हा का एक महत्वपूर्ण योगदान यह भी था कि उन्होंने मनोविज्ञान को सामाजिक विकास से जोड़कर देखा। उनका मानना था कि मनोविज्ञान केवल प्रयोगशालाओं तक सीमित न रहकर समाज की वास्तविक समस्याओं के समाधान में योगदान दे। उन्होंने गरीबी, ग्रामीण विकास, शिक्षा और सामाजिक परिवर्तन जैसे विषयों पर विशेष ध्यान दिया। यह दृष्टिकोण आज भी उतना ही महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारत बेरोजगारी, मानसिक स्वास्थ्य संकट, पर्यावरणीय तनाव, प्रवासन और सामाजिक ध्रुवीकरण जैसी चुनौतियों का सामना कर रहा है।

कोविड-19 महामारी ने यह स्पष्ट कर दिया कि सामूहिक व्यवहार, सामाजिक विश्वास और मनोवैज्ञानिक दृढ़ता को समझे बिना किसी भी संकट का प्रभावी प्रबंधन संभव नहीं है। इस दृष्टि से सिन्हा का समाजोपयोगी मनोविज्ञान आज भी मार्गदर्शक सिद्ध होता है। हालाँकि समकालीन चुनौतियाँ नई प्रकृति की हैं। साइबर बुलिंग, डिजिटल व्यसन, फेक न्यूज़, एल्गोरिथ्मिक प्रभाव, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और जलवायु चिंता जैसे विषय आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान के सामने नई चुनौतियाँ प्रस्तुत करते हैं। इन विषयों को समझने के लिए सिन्हा की अवधारणाओं का विस्तार आवश्यक है।

धर्म और आध्यात्मिकता के विषय में भी सिन्हा का दृष्टिकोण उल्लेखनीय था। उन्होंने भारतीय धार्मिक और दार्शनिक परंपराओं में निहित मनोवैज्ञानिक अंतर्दृष्टियों को महत्वपूर्ण माना। वर्तमान समय में सकारात्मक मनोविज्ञान, माइंडफुलनेस, ध्यान और आध्यात्मिक कल्याण पर बढ़ते शोध उनके विचारों की प्रासंगिकता को पुष्ट करते हैं। किंतु समकालीन भारत में धर्म केवल व्यक्तिगत आस्था का विषय नहीं रह गया है; यह राजनीति, पहचान और सामाजिक संघर्ष से भी जुड़ गया है। इसलिए सामाजिक मनोविज्ञान को धर्म के सकारात्मक और नकारात्मक दोनों पक्षों का संतुलित अध्ययन करना होगा।

सांस्कृतिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में सिन्हा की विरासत अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि संस्कृति को मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के बाहरी कारक के रूप में नहीं बल्कि उनके निर्माणकारी तत्व के रूप में समझा जाना चाहिए। आधुनिक शोध भी यही दर्शाते हैं कि भावनाएँ, प्रेरणाएँ, संज्ञानात्मक प्रक्रियाएँ और सामाजिक संबंध सांस्कृतिक संदर्भों से गहराई से प्रभावित होते हैं। वैश्वीकरण के दौर में जब व्यक्ति अनेक सांस्कृतिक संसारों के बीच जीवन व्यतीत कर रहा है, तब यह दृष्टिकोण और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है ।

डिजिटल समाज का उदय संभवतः वह क्षेत्र है जहाँ सिन्हा के सिद्धांतों को सबसे अधिक विस्तार की आवश्यकता है। आज सोशल मीडिया, ऑनलाइन समुदाय और वर्चुअल नेटवर्क सामाजिककरण के प्रमुख माध्यम बन चुके हैं। व्यक्ति की पहचान, सामाजिक प्रतिष्ठा और संबंधों का निर्माण अब केवल भौतिक परिवेश में नहीं बल्कि डिजिटल परिवेश में भी होता है। ऐसे में सामाजिक मनोविज्ञान को सांस्कृतिक संदर्भों के साथ-साथ डिजिटल संदर्भों को भी गंभीरता से समझना होगा ।

पद्धतिगत स्तर पर भी सिन्हा का योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने विदेशी मनोवैज्ञानिक परीक्षणों और उपकरणों के अंधानुकरण का विरोध किया तथा सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त अनुसंधान विधियों के विकास पर बल दिया। आज भी शोधकर्ता यह स्वीकार करते हैं कि किसी समाज की सांस्कृतिक विशेषताओं की

उपेक्षा करने वाले उपकरण भ्रामक निष्कर्ष उत्पन्न कर सकते हैं। आधुनिक तकनीकों और उन्नत अनुसंधान पद्धतियों के विकास के बावजूद सांस्कृतिक संवेदनशीलता की आवश्यकता बनी हुई है।

अंततः दुर्गानंद सिन्हा की 'सोशल साइकोलॉजी इन इंडिया' का आलोचनात्मक पुनर्मूल्यांकन यह स्पष्ट करता है कि उनका कार्य भारतीय सामाजिक मनोविज्ञान की आधारशिला के रूप में आज भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने भारतीय समाज को उसकी अपनी सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक वास्तविकताओं के संदर्भ में समझने का जो प्रयास किया, वह आज भी प्रेरणादायक है। यद्यपि वैश्वीकरण, डिजिटल क्रांति, लैंगिक परिवर्तन, पर्यावरणीय संकट और पहचान-आधारित राजनीति ने नई सामाजिक परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी हैं, फिर भी सिन्हा द्वारा प्रतिपादित सांस्कृतिक संदर्भ, सामाजिक मूल्यों, परिवार, समुदाय और स्वदेशी ज्ञान की अवधारणाएँ आज भी प्रासंगिक बनी हुई हैं। उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि यह थी कि उन्होंने भारतीय मनोविज्ञान को आत्मनिर्भर चिंतन की दिशा प्रदान की। आधुनिक भारत की जटिलताओं को समझने के लिए उनके विचारों का पुनर्पाठ और पुनर्व्याख्या आवश्यक है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि दुर्गानंद सिन्हा केवल एक मनोवैज्ञानिक नहीं बल्कि भारतीय सामाजिक चिंतन के ऐसे निर्माता थे जिन्होंने मनुष्य, समाज और संस्कृति के संबंधों को समझने के लिए एक दीर्घकालिक वैचारिक आधार प्रदान किया, जिसकी उपयोगिता आज भी बनी हुई है।

संदर्भ सूची

1. सिन्हा, डी. (1965)। आधुनिक मनोविज्ञान का भारतीय चिंतन के साथ एकीकरण। *सामाजिक एवं नैदानिक मनोविज्ञान जर्नल*।

2. सिन्हा, डी. (1977)। *भारत में मनोविज्ञान पर एक दृष्टिकोण*। इलाहाबाद: डी. सिन्हा प्रकाशन।

3. सिन्हा, डी. (2015)। *भारत के लिए मनोविज्ञान*। नई दिल्ली: सेज पब्लिकेशन्स इंडिया।

4. सिन्हा, डी. (1994)। भारत में मनोविज्ञान की उत्पत्ति और विकास। *अंतरराष्ट्रीय मनोविज्ञान जर्नल, 29*(6), 695–705।

5. सिन्हा, डी. (1981)। भारत में प्रायोगिक सामाजिक मनोविज्ञान। जे. पांडेय (सं.), *भारत में प्रायोगिक सामाजिक मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य* में।

6. परांजपे, ए. सी. (2011)। भारतीय मनोविज्ञान और अंतरराष्ट्रीय संदर्भ। *भारतीय मनोविज्ञान जर्नल*।

7. सिंह, के. (2024)। मनोविज्ञान का भारतीयकरण: दुर्गानंद सिन्हा की विरासत का विस्तार। *जर्नल ऑफ ह्यूमन वैल्यूज़*।

8. अखिलानंद, एस. (1946)। *हिंदू मनोविज्ञान*। लंदन: जॉर्ज एलन एंड अनविन।

9. अखिलानंद, एस. (1952)। *मानसिक स्वास्थ्य और हिंदू मनोविज्ञान*। लंदन: जॉर्ज एलन एंड अनविन।

10. ऑलपोर्ट, जी. डब्ल्यू. (1955)। *अस्तित्व निर्माण*। येल यूनिवर्सिटी प्रेस।

11. कॉनेंट, जे. बी. (1953)। *आधुनिक विज्ञान और आधुनिक मनुष्य*। न्यूयॉर्क: डबलडे।

12. हिरियन्ना, एम. (1951)। *भारतीय दर्शन की रूपरेखा*। लंदन: एलन एंड अनविन।

13. हक्सले, ए. (1954)। *अनुभूति के द्वार*। लंदन: चैटो एंड विंडस।

14. ट्रायंडिस, एच. सी. (1995)। *व्यक्तिवाद और सामूहिकता*। वेस्टव्यू प्रेस।

15. मार्कस, एच. आर., एवं किटायामा, एस. (1991)। संस्कृति और आत्म। *मनोवैज्ञानिक समीक्षा*।

16. बेरी, जे. डब्ल्यू. (2003)। अंतर-सांस्कृतिक मनोविज्ञान। *जर्नल ऑफ क्रॉस-कल्चरल साइकोलॉजी*।

17. वाइगोत्स्की, एल. एस. (1978)। *समाज में मन: उच्चतर मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का विकास*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

18. ब्रूनर, जे. (1990)। *अर्थ निर्माण के कार्य*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

19. कोल, एम. (1996)। *सांस्कृतिक मनोविज्ञान: एक बार और भविष्य का अनुशासन*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

20. श्वेडर, आर. ए. (1991)। *संस्कृतियों के माध्यम से विचार*। हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

21. हॉफ्स्टेड, जी. (2001)। *संस्कृति के परिणाम: मूल्यों, व्यवहार, संस्थाओं और संगठनों में राष्ट्रों के बीच अंतर*। सेज।

22. कागित्सिबासी, सी. (1996)। *विभिन्न संस्कृतियों में परिवार और मानव विकास*।

23. निस्बेट, आर. ई. (2003)। *विचारों का भूगोल: एशियाई और पश्चिमी लोग अलग-अलग क्यों सोचते हैं... और क्यों*। फ्री प्रेस।

24. हीलस, पी. (1996)। *न्यू एज आंदोलन*। ब्लैकवेल।

25. मिश्रा, जी. (2010)। *भारत में मनोविज्ञान: संस्कृति का संदर्भ*।

26. दलाल, ए. के. (2011)। *भारतीय मनोविज्ञान: एक उभरता प्रतिमान*।

27. पांडेय, जे. (1988)। *भारत में मनोविज्ञान: पुनर्विचार*।

28. सिन्हा, जे. बी. पी. (1980)। *पालन-पोषण आधारित कार्य-नेतृत्व मॉडल*।

29. त्रिपाठी, आर. सी. (1996)। *भारत में स्वदेशी मनोविज्ञान*।

30. वर्मा, जे. (2005)। *भारत में सामाजिक मनोविज्ञान: एक समीक्षा*।

31. सिन्हा, आर. के. (2008)। *भारत में परिवार और समाजीकरण*।

32. सिंह, ए. के. (2012)। *भारत में अंतर-सांस्कृतिक मनोविज्ञान*।

33. मिश्रा, एस. (2009)। *भारत में अनुप्रयुक्त सामाजिक मनोविज्ञान*।

34. भावुक, डी. पी. एस. (2008)। *स्वदेशी और सांस्कृतिक मनोविज्ञान*।

35. मार्सेला, ए. जे. (2000)। *जातीय-सांस्कृतिक मनोविज्ञान*।

36. किम, यू., यांग, के. एस., एवं ह्वांग, के. के. (2006)। *स्वदेशी और सांस्कृतिक मनोविज्ञान*।

37. बेरी, जे. डब्ल्यू. (2011)। *अंतर-सांस्कृतिक मनोवैज्ञानिक अनुसंधान*।

38. स्मिथ, पी. बी. (2006)। *सामाजिक मनोविज्ञान के सांस्कृतिक आयाम*।

39. एडम्स, जी., एवं मार्कस, एच. आर. (2004)। *संस्कृति और पहचान*।

40. चक्कराथ, पी. (2010)। *भारतीय मनोविज्ञान और सांस्कृतिक परंपराएँ*।

41. सिन्हा, डी. (1986)। *तीसरी दुनिया के देश में मनोविज्ञान*।

42. दलाल, ए. के. (2013)। *भारत में मनोविज्ञान और आध्यात्मिकता*।

43. मिश्रा, जी., एवं गर्गेन, के. जे. (1993)। *भारत में सामाजिक निर्माणवाद*।

44. राव, के. आर. (2011)। *भारतीय मनोविज्ञान: वैश्विक प्रतिमान की ओर*।

45. कॉर्नेलिसेन, आर. एम. एम. (2014)। *भारतीय मनोविज्ञान की नींव*।

46. राव, एच. एस. आर. (2008)। *मनोविज्ञान में स्वदेशी दृष्टिकोण*।

47. काकर, एस. (1982)। *आंतरिक संसार*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

48. नांदी, ए. (1983)। *निकट शत्रु: औपनिवेशिक भारत में आत्म और मानस*। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

49. मोहंती, ए. के. (2000)। *भारत में मनोविज्ञान और संस्कृति*।

50. मिश्रा, जी., एवं परांजपे, ए. सी. (2012)। *भारत में मनोविज्ञान: पुनर्विचार*।

51. सिन्हा, डी. (2005)। *सामाजिक मनोविज्ञान और विकास*।

52. सिंह, ए. (2018)। *भारतीय मनोविज्ञान: प्रवृत्तियाँ और चुनौतियाँ*।

53. पांडेय, जे. (2004)। *भारत में प्रायोगिक सामाजिक मनोविज्ञान*।

54. दलाल, ए. के. (2016)। *भारतीय संदर्भ में सांस्कृतिक मनोविज्ञान*।

55. वर्मा, जे., एवं ट्रायंडिस, एच. सी. (1999)। *अंतर-सांस्कृतिक मनोविज्ञान अध्ययन*।